International Journal of Sanskrit Research 2022; 8(5): 153-160

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2022; 8(5): 153-160
© 2022 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 26-06-2022
Accepted: 29-07-2022

जिनगर चंचलबेन चांदमलभाई
संस्कृत विभाग,
विश्वविद्यालय-सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय,
उदयपुर, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
जिनगर चंचलबेन चांदमलभाई
संस्कृत विभाग,
विश्वविद्यालय-सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय,
उदयपुर, राजस्थान, भारत

आर्षकाव्यों में राजनय एवं प्रशासन

जिनगर चंचलबेन चांदमलभाई

प्रस्तावना

"आर्ष" शब्द का अर्थ है- ऋषियों से संबधित, अर्थात जो ऋषियों की वाणी से मुखरित होकर उत्पन्न हुआ हो, जो ऋषियों द्वारा लाया गया हो अथवा जो ऋषियों द्वारा किया गया हो, वह आर्ष कहलाता हैं। क्यूंकि वेद ऋषियों द्वारा कहीं गई मौखिक रचनाएँ हैं अतः वेद अपौरुषेय कहे गए है परन्तु रामायण और महाभारत ऋषियों द्वारा लिखित रूप में रची गई संसार की सर्वप्रथम रचनाएँ है, अतः इन्हें आर्ष महाकाव्य कहा गया है।[1]

रामायण महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित हैं जो संस्कृत साहित्य का आरम्भिक महाकाव्य हैं। सात कांड में विभाजित इस महाकाव्य में कुल २४००० श्लोक हैं।[2] इसमें श्री राम के चरित्र का उत्तम और विस्तृत वर्णन किया गया हैं। वर्तमान में श्री राम के चरित्र पर जितने ग्रन्थ उपलब्ध हुए उन सब का आधार वाल्मीकि रामायण हैं। महर्षि वाल्मीकि ने एक श्लोक से संपूर्ण रामायण रच डाली,

> मा निषाद् प्रतिष्ठाम त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
> यत्कौन्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।[3]

महाभारत का एक प्रमुख काव्य ग्रंथ है, जो स्मृति के इतिहास वर्ग में आता है। इसे भारत भी कहा जाता है। यह काव्यग्रंथ भारत का अनुपम धार्मिक, पौराणिक, ऐतिहासिक और दार्शनिक ग्रंथ हैं। विश्व का सबसे लंबा यह

[1] आर्ष महाकाव्यों में रामायण और महाभारत पृ.सं. 97.
[2] संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ.सं 124
[3] श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण/ बालकाण्ड/2/15

साहित्यिक ग्रंथ और महाकाव्य, हिन्दू धर्म के मुख्यतम ग्रंथो में से एक है। इस ग्रन्थ को हिन्दू धर्म में पंचम वेद माना जाता है। यद्यपि इसे साहित्य की सबसे अनुपम कृतियों में से एक माना जाता है, किन्तु आज भी यह ग्रंथ प्रत्येक भारतीय के लिये एक अनुकरणीय स्रोत है। यह कृति प्राचीन भारत के इतिहास की एक गाथा है। परंपरागत रूप से, महाभारत की रचना का श्रेय वेदव्यास को दिया जाता है। महाभारत के अनुसार, कथा को 24,000 श्लोकों के एक छोटे संस्करण से विस्तारित किया जाता है, जिसे केवल भारत कहा जाता है। हिन्दू मान्यताओं, पौराणिक संदर्भो एवं स्वयं महाभारत के अनुसार इस काव्य का रचनाकार वेदव्यास जी को माना जाता है। इस काव्य के रचयिता वेदव्यास जी ने अपने इस अनुपम काव्य में वेदों, वेदांगो और उपनिषदों के गुह्यतम रहस्यों का निरुपण किया हैं। इसके अतिरिक्त इस काव्य में न्याय, शिक्षा, चिकित्सा, ज्योतिष, योगशास्त्र, अ र्थशास्त्र, वास्तुशास्त्र, धर्मशास्त्र का भी विस्तार से वर्णन किया गया हैं।[4]

राजनय

राजनय के विभिन्न अर्थ बताए गए हैं। राजनय आपसी मतभेदों अथवा विवादों को समझौतों द्वारा मिटाने की कला है। कुछ विद्वान्राजनय को शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व मानते हैं । कुछ, उसे किसी "राज्य की दूसरी राज्य के प्रति नीति" की संज्ञा देते हैं। निकलसन ने राजनय का सुंदर वर्णन किया हैं। साधारण, संकुचित, और सरल अर्थो में राजनय एक राज्य में दूसरे राज्य का राजनीतिक प्रतिनिधित्व मात्र हैं । राष्ट्रो अथवा समूहों के प्रतिनिधियों द्वारा किसी मुद्दे पर चर्चा एवं वार्ता करने की कला व अभ्यास राजनय (डिप्लोमेसी) कहलाता हैं। निकलसन ऑक्सफोड इंगिलश डिक्शनरी में दी गई राजनय की परिभाषा को स्वीकार करता हैं । जो इस प्रकार हे -"राजनय वार्ता द्वारा आन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का प्रबन्ध हैं। यह वह तरीका है जिसके द्वारा इन सम्बधों को राजदूतों तथा विशेष दूतों द्वारा समायोजित एवं सम्भव बनाया जाता हैं। यह राजनय का व्यवसाय अथवा कला हैं।[5]

"रेगला भी "राजनय को समझौता वार्ता की कला मानते हैं"।[6] इन संबंधो को जोडने के लिए योग्य व्यकित एक देश से दूसरे देश में भेजे जाते हैं। ये व्यकित अपनी योग्यता, कुशलता, और कूटनीति से दूसरे देश को प्रायः मित्र बना लेते हैं। प्राचीन काल में भी एक राज्य दूसरे राज्य से कूटनीतिक सम्बन्ध जोडने के लिए अपने कूटनीतिज्ञ भेजता था। पहले कूटनीति का अर्थ 'सौदे में या लेन देन में वाक्य चातुरी, छल-प्रपंच, धोखा-धडी लगाया जाता था। जो व्यकित कम मूल्य देकर अधिकाधिक लाभ अपने देश के लिए प्राप्त करता था, कुशल कूटनीतिज्ञ कहलाता था। राजनय का वर्तमान आंतरराष्ट्रीय राजनीति में अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान हैं। 'डिप्लोमेसी' शब्द की उत्त्पत्ति यूनानी शब्द' डिप्लाउन' से हुई हैं, जिसका अर्थ हैं - मोड़ना अथवा दोहरा करना। राजनय का वर्तमान आंतरराष्ट्रीय राजनीति में अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान हैं। अंग्रेजी में 'डिप्लोमेसी' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम 1645 में किया गया। 1716 में 'डिप्लोमेटव 'डिप्लोमेटिस्ट' शब्दों का प्रयोग कोलियर्स ने अपनी पुस्तक में राजनियकतत्र में कार्यरत लोगों के लिए किया। 1796 मेबर्क ने 'राजनय' व 'राजनयिक' शब्दों का प्रयोग किया।[7]

प्रशाशन

प्रशासन का शाब्दिक अर्थ है - सार्वजनिक या निजी मामलों का प्रबंधन। ई. एन.ग्लैडन ने कहा "प्रशासन एक लंबा और थोड़ा आडंबर पूर्ण शब्द है, लेकिन

[4] संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ.सं 124

[5] राजनय : सिध्धांत एवं व्यवहार पृ.सं -9

[6] वही पृ .सं 9

[7] भारतीय राजनय पृ. सं -4

इसका सीधा - सादा अर्थ है - मामलों का प्रबंध करना, लोगों का देखभाल करना या उनका ध्यान रखना । अंग्रेजी शब्द 'Administer' (प्रशासन करना) दो लेटिनशब्दो ad और Minister के मेल से निकलते है जिनका अर्थ है-'सेवा करना' या प्रबंधित करना'। सार्वजनिक व्यवस्था की दृष्टि से किया जाने वाला कार्य, किसी राज्य अथवा संस्था के परिचालन की व्यवस्था या प्रबंध या शासन।[8]

प्राचीन भारत में प्रशासन पद्धति का क्रमिक रुप से विकास हुआ जो वैदिक काल से प्रारम्भ होकर सामान्यतः मुगल काल से लेकर ब्रिटिश प्रशासन तथा आधुनिक प्रशासन की स्थापना तक विस्तृत है। वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत, मनुस्मृति, शुक्रनीति, कौटिल्य (अर्थशास्त्र) बौद्ध साहित्य, जैन साहित्य, धर्मशास्त्र, पुराण, आदि के द्वारा क क्रमशः प्रशासन का स्वरूप विकसित और स्थिर होता गया। प्रथमतः कौटिल्य अर्थशास्त्र में प्रशासन के अति विकसित व सिद्धान्त रूप का वर्णन है। प्रशासन के विकास में अनेक प्रकार के प्रशासनिक संगठन और व्यवस्था बनायी गयी हैं। प्राचीन भारत में राज्य के प्रशासन की शक्तियां काफी कुछ राजा के हाथों में केन्द्रित थी और राजा की सहायता के लिए अनेक अधिकारी थे। रामायण और महाभारत में प्रशाशनिक अधिकारियों एवं उनसे सम्बन्धित विभागों का उल्लेख मिलता हैं।

रामायण में राजनय

राजनय का उद्देश्य क्या है? क्या कारण है कि सभी छोटे- छोटे राज्य राजनय के प्रयोग की आवश्यकता महसूस करते हैं और दूतों तथा दूतावासों पर करोड़ों रुपये खर्च करते हैं? परम्परावादी सिद्धान्तों के अनुसार राजनय का मूल उद्देश्य अन्य राज्यों के साथ मित्रता के सम्बन्ध स्थापित कर राष्ट्रीय हितों की अभिवृद्धि तथा उनकी सुरक्षा करना हैं।[9] वाल्मीकि की यह मान्यता है कि राज्य मानव समाज के लिए एक अनिवार्य संस्था है। राजा अथवा राज्य के बिना समाज में अत्यन्त ही भयावह स्थिति उत्पन्न हो जाती है। वाल्मीकि के शब्दो में, "जैसे जल के बिना नदियाँ, घास के बिना वन और ग्वालों के बिना गायों की शोभा नहीं होती, उसी प्रकार राजा के बिना राज्य शोभा नहीं पाता है।"[10]

राजनय सम्बन्धी विचार

वाल्मीकि ने रामायण में यत्रतत्र प्रसंगवश राजनीतिक सिद्धान्तों एवं व्यवहारों का उल्लेख किया है। संक्षेप में उनके राजनयसिद्धान्तों को निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत स्पष्ट किया गया है-

राजनय के लक्ष्य

वाल्मीकि के मतानुसार राजनय द्वारा जिन लक्ष्यों को प्राप्त किया जाता है, वे इस प्रकार है-

- राज्य का प्रथम लक्ष्य है खोये हुए राज्य की प्राप्ति अथवा नवीन राज्य की उपलब्धि। सुग्रीव एवं विभीषण का राम के साथ राजनयिक सम्बन्ध स्थापित करना ।[11]
- अन्य राज्यों से अपनी प्रभुता स्वीकार करवाना इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक राज्य राजनय के माध्यम सें मित्रों की संख्या बढ़ाकर और सुवाओं का दमन करकें अपनी शक्ति में वृद्धि करता है ताकि अन्य राज्य उसका आधिपत्य स्वीकार कर लें। राजसूय यज्ञ और अश्वमेघ यज्ञ इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिए किये गए राजनयिक व्यवहार हैं। श्रीरामनेंलंका विजय उपरान्त अश्वमेघ यज्ञ किया था।[12]
- युद्ध के रोकने के लिए राजनय अपनाया जाता है। जब दो या अधिक राज्यों में आपसी सम्बन्ध में तनाव आयें और युद्ध की स्थिति बन जायें तब उसे रोकने के लिए राजनयिक

[8] संस्कृत संस्कृति और प्रशासन पृ.सं- 22

[9] भारतीय राजनय का ऐतिहासिक विकास पृ.सं -39

[10] आर्ष रामायण में मानव उत्कर्ष के सिद्धान्त, पृं. सं- 201

[11] राजनय : सिध्धांत एवं व्यवहार पृ.सं -34

[12] प्राचीन भारत के राजनीतिक विचारक पृ.सं- 68

आचरण का सहारा लिया जाता हैं। श्रीराम एवम् रावण के बीच युद्ध की स्थिति रोकने के लिए श्रीराम ने हनुमान और अंगद का समझौता करने भेजा था। किन्तु इन राजनयिक प्रयासों की सफलता मिली नहीं और अन्त में युद्ध होकर रहा।[13]

- राजनय का प्रयोग शत्रु पक्ष की तैयारी, मन्तव्य, सहायक, विरोधी, जनसमर्थन, आदि की समुचित जानकारी प्राप्त करने के लिए भी किया जाता है।

राजनय के उपाय

वाल्मीकि ने राजनय के साधन अथवा उपायों के रूप में साम, दाम, दण्ड, और भेद नीतिका उल्लेख किया है । ये उपाय बाद में भारतीय राजनय के अभिन्न अंग बन गये।

षड्गुण्य नीति

डॉ. रामाश्रय शर्मा ने अपनी पुस्तक 'ए सोशियोपॉलीटिकलस्टडी ऑफ द वाल्मीकि रामायण' में स्पष्ट किया है कि वाल्मीकि राजनय की छः गुणीय नीति से पूर्ण रूप से परिचित थे। इस नीति में सन्धि, विग्रह, आसन, समाश्रय, यान तथा दैधीभाव आते हैं।[14]

दूत की उन्मुक्तियाँ एवं विशेषाधिकार

वाल्मीकि ने राजदूतों के विशेषाधिकारो एवं उन्मुक्तयों का वर्णन किया है। दूत को अवध्य माना गया हैं, क्योंकि वह स्वेच्छा से नही वरन् स्वामी के आदेश से आता है सुन्दरकाण्ड में राक्षस राज रावण ने दूत के वध की बडी निन्दा की है। रामायण में दूत के वध न करने के सिद्वान्त का केवल घामिक आधार पर ही नहीं वरन् व्यावहारिक, तार्किक, लोक परम्परा, राजा की प्रतिष्ठा आदि के आधार पर भी मान्यता दी गई है।[15]

दूतों की योग्यताएँ

अयोध्याकाण्ड में भरत से प्रश्न करते हुए राम ने कहा था कि राजदूत के पद पर नियुक्त किया गया व्यकित गुणवान तथा सद्बुध्दि युक्त होना चाहिए। सुन्दरकाण्ड में दूत की ये योग्यताएँ मानी गईं - शस्त्र विद, बोलने में चतुर, सहृदय, बुद्धिमान, प्रतिभासम्पन्न, ईमानदार, उच्चकुल में जन्मा आदि।[16]

गुप्तचर व्यवस्था

वाल्मीकि ने गुप्तचरों के महत्त्व, गुण, कार्य, स्थान आदि के विषय में प्रकाश डाला हैं। आरण्यकाण्ड में वाल्मीकि ने स्पष्ट किया है कि जो राजा राज्य की देखभाल के लिए गुप्तचरों की नियुक्ति नहीं करता, ऐसे राजा को प्रजा दूर से ही त्याग देती हैं। गुप्तचर का कार्य शत्रु की शक्ति का सही-सही मूल्यांकन करना, उसकी किलेबन्दी का अध्ययन करना तथा उसकी सैनिक योजनाओं एवं अभियानों को जानना होता था। कभी-कभी गुप्तचरों को यह कार्य भी सौंपा जाता था किवे किसी अधिकारी की जाँच करें। आरण्यक काण्ड के अनुसार शत्रु अथवा उसके अधिकारियों की हत्या के लिए भी गुप्तचरों को नियुक्त किया जाता था।[17]

इस प्रकार स्पष्ट है कि वाल्मीकि ने अपने राजनैतिक विचारों में तात्कालिक राजनयिक विचारों से स्वरूप का चर्थाथ चित्रण किया हैं।

रामायण में प्रशासन

रामायण में वर्णित शासन का रुप राजतंत्रीय था। प्रशासन का अध्यक्ष स्वयं राजा था। रामास्वामी शास्त्री का कथन है कि "वाल्मीकि के काल में

[13] वही पृ.सं 34

[14] प्राचीन भारत के राजनीतिक विचारक पृ.सं-68

[15] वही पृ.सं – 68

[16] वही पृ.सं -68

[17] वही पृ.सं- 69

राजतन्त्र सीमित और संवैधानिक था। एक और वह धर्मशास्त्रों से सीमित था दूसरी और मन्त्रिमण्डल व सभा की शक्तियों से। यदि राजा धर्म के विरुद्ध कार्य करता था तो उसे निष्कासित् किया जा सकता था या मारा भी जा सकता था ।"[18] इस प्रकार धर्म के अनुसार प्रजा का पालन और अधर्म का नाश करना राज्य का मूल उद्देश्य था। श्रीराम के राज्य में प्रजा का पालन - पोषण, न्याय और दण्ड, तथा दुष्टों और शत्रुओं का नाश तथा राज्य की सब प्रकार से (चतुर्दिक उन्नति) को पूरा किया गया है। राजा को अपने राज्य कल्याण के बारे मे सोचते हुए लोगो का धर्मानुसार पालन, स्त्रीयों का संरक्षण, पशुधन की वृद्धि सब प्रकार से ध्यान रखना चाहिए। राजा को अपने कर्मचारियो से ऐसे संम्बध रखने चाहिए जिससे ना तो वो निडर होकर राजा के पास आएं और ना हि वह डरते हुए कोई बात कहे। वाल्मीकि लिखते है कि राजा को बिना सोंचे कभी किसी निर्दोष को दण्ड नहि देना चाहिए ।वाल्मीकि रामायण में राजा दशरथ के शासन में वहाँ के लोगो का वर्णन किया हे -

सर्वेनराश्चनार्यश्चधर्मशीलाः सुसंयता : ।
मुदिताःशीलवृत्ताभ्यांमहर्षयइवामला : ॥[19]

राजा का मन्त्री तथा मन्त्री मण्डल के बारे मे वाल्मीकि कहते है कि राजा को राज्य कार्य के संचालन मे सहायता और परामर्श देने के लिए पुरोहित, मन्त्री, और सभासद थे। बालकाण्ड के सप्तमसर्ग में राजा दशरथ के मन्त्रियों का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि "इक्ष्वाकुवंशीय वीर महामना महाराजा दशरथ के मंत्रियोचित गुणों से सम्पन आठ मन्त्री में जो मन्दा के तत्त्व को समझने वाले और बाहरी चेष्टा देखकर ही मन के भाव को समझ लेने वाले थे।

मन्त्रसंवरणेशक्ताः शक्ताः सूक्ष्मासुबुद्धिषु।
नीतिशास्त्रविशेषज्ञा : सततंप्रियवादिनः ॥[20]

वाल्मीकि ने दो प्रकार के मन्त्रियों का वर्णन किया है-(i) अमात्य(ii) मन्त्री। अमात्य हमेशा राजा के पास रहेता है। 'रामायण में राजा दशरथ के आठ अमात्य गिनाये गया हैं। श्रीराम के राज्य में शासन कैसा था? अथवा रामराज्य में राज्य का क्या उद्ददेश्य था? श्री वाल्मीकि जी कहते है कि "श्रीराम के राज्य में पुरवासी बडे हर्षित हैं और मेघ अमृत के समान जल गिराते हुए समय पर वर्षा करते हैं। न्यायालय के न्यायाधीश घन के लोभी नहीं होने चाहिए तथा वे घनी और निर्धन के बीच विवाद का निर्णय करते समय निष्पक्ष रहें। रामायण के अयोध्याकाण्ड में बताया है कि राजा द्वारा चुना गया सेनापति सदा संतुष्ट, शूरवीर, धैर्यवान, बुद्धिमान, पवित्र, कुलीन, एवं अपने में अनुराग रखने वाला तथा रणकौशल में निपुण हो। इसके अतिरिक्त प्रधान योद्धा का बलवान, युद्ध कुशल, तथा पराक्रमी होना चाहिए। सैनिको को उनके निश्वित किये गये वेतन भत्ते समय पर दिये जाएँ, उसमें विलम्ब नहीं होना चाहिए। वाल्मीकि कहते है कि राजदूत के पद पर वह व्यक्ति नियुक्त किया जाना चाहिए जो देश का निवासी हो, विद्वान्, कुशल, प्रतिभाशाली, जैसा कहा जाये वैसी ही बात दूसरों से कहने वाला तथा सद्विवेक युक्त होना चाहिए। राज्य में गुप्तचर व्यवस्था सुदृढ होनी चाहिए। वाल्मीकि ने लिखा है कि राजा को शत्रु पक्ष के 18 व अपने पक्ष के 15 तीर्थ की तीन - तीन

[18] प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति /महाकाव्य काल पृ.सं-107

[19] रामायण/बालकाण्ड /6/9 पृ.सं 71

[20] रामायण/बालकाण्ड /7/19 पृ सं-74

अज्ञात गुप्तचरों द्वारा देखभाल या जाँच - पडताल की जानी चाहिए ।[21]

महाभारत में राजनय

महाभारत काल में अनेक छोटे-छोटे राज्य थे तथा कुछ बड़े राज्य और साम्राज्य भी शामिल थे। उनके बीच शांतिकाल और युद्धकाल दोनों में ही पारस्परिक सम्बन्ध थे। उन्हें अर्न्तराज्यीय सम्बन्ध कहा जाता हैं। क्योंकि कोई भी राजा दूसरे राज्य से अलग रहकरअपना अस्तित्व स्थिर नहीं कर सकता था बडे-बडे यज्ञों, यथा अश्वमेघ, राजसूय और वाजपेय आदि ने उनके बीच सम्बन्धों को विकसित करने में बहुत योग दिया। महाभारत के अर्न्तगत अर्न्तराज्यीय सम्बन्धों के परिप्रेक्ष्य में दूतों काउल्लेख किया गया है। महाभारत के अनुसार दूत न केवल संदेशवाहक था अपितु उससे सन्धि विग्रह और नीति के उपायों से सम्बद्ध कार्यो के सम्पादन की अपेक्षा भी की जाती थी। महाभारत में दूत की योग्यताओं के लिए वेदव्यास कहते है- दूत में कुछ आवश्यक गुण होने चाहिए यथा जो स्तब्ध न हो, स्थिर भाव, विनयी एवं संकट में धैर्य रखने वाला हो, साहसी हो, उत्तर देने में प्रवीण, क्रोध न करने वाला, दूसरे के बहकावे में न आने वाला, निरोगी, उच्चकुलीन, उदार, या मधुर वचन बोलने वाला हो। महाभारत काल में दूत व्यवस्था के वर्णन से यह निष्कर्ष निकलता है कि अर्न्तर्राज्यीय सम्बन्धों में दूत की भूमिका महत्त्वपूर्ण है।

वेदव्यास ने राजनय के चारों उपाय - साम, दाम, दण्ड, भेदनीति का वर्णन किया हैं।[22]

साम नीति

साम नीति का प्रयोग सामान्यतः शक्तिशाली शत्रु को सन्तुष्ट करने के लिए किया जाता है। व्यासजी ने कमजोर राज्यों को परामर्श दिया है कि वे अपने से शक्तिशाली को हाथ जोड़कर प्रसन्न रखें तथा उससे मीठे वचन बोलें। विद्वान् राजा जब शत्रु के बल को अपने से अधिक समझे तब बेंत का ही ढंग अपना ले अर्थात् उसके सामने नतमस्तक हो जायें।[23]

दाम नीति

महाभारत में दाम नीति के प्रयोग का उल्लेख किया

[21] संस्कृत संस्कृति और प्रशासन पृ सं- 23

[22] प्राचीन भारत के राजनीतिक विचारक पृ.सं -78

[23] भारतीय राजनय ऐतिहासिक विकास पृ सं- 39

गया है। व्यासजी के कथनानुसार राजा से अपनी रक्षा करने के लिए अपना कोष तथा सेना दे देनी चाहिए। एक शक्तिशाली राजा से अपनी रक्षा करने के लिए अपना कोष तथा सेना दे देनी चाहिए। एक शक्तिशाली राजा भी कमजोर तथा जरूरतमन्द राजा को सहायता प्रदान करके उसे अपना मित्र बना लें।[24]

भेद नीति

व्यासजी के अनुसार भेदनीति का प्रयोग करने से पूर्व शत्रु की शक्ति आदि का पता लगाना आवश्यक हैं। उसके बाद उपहार प्रदान करके या विष आदि के प्रयोग से उसकी शक्ति को क्षीण करने की चेष्टा करनी चाहिए। बुद्धिमान राजा को सर्वप्रथम शत्रु के मूल का पता लगाकर उसे उखाड़ने का प्रयत्न करना चाहिए। राजा को अपने विश्वासपात्र पुरुष भेजकर शत्रु की सेना में फूट डालने की चेष्टा करनी चाहिए।[25]

दण्ड नीति

व्यासजी ने दण्डनीति को अन्तिम उपाय के रूप में स्वीकार किया हैं जब शत्रु को पराजित करने के अन्य तीनों उपाय असफल सिद्ध हो जाएँ तो राजा को दण्ड की नीति अपनानी चाहिए। व्यासजी ने राजनय के इन चारों उपायों के साथ ही पाँचवें उपाय उपेक्षा का भी उल्लेख किया हैं।

इस नीति का अवलम्बन दो युद्धमान् महाशक्तियों के संघर्ष से स्वयं को बचाने के लिए किया जाता है। इन उपायों के अतिरिक्त व्यासजी ने मन्त्र, औषध, तथा इन्द्रजाल का भी उल्लेख किया हैं। इस प्रकार वेदव्यास कृत महाभारत में राजनय का उल्ल्लेख हैं।[26]

महाभारत में प्रशासन

महाभारत काल में शासन पद्धति राजतंत्रात्मक थी तथा राजा उसका केन्द्र बिन्दु था। महाभारत में वेद व्यास के मतानुसार समूचे राज्य का प्रशासनिक वर्गीकरण इस प्रकार किया जाए कि एक गाँव का, दस गाँवों का, बीस गाँवों का, सौ गाँवों का तथा एक हजार गाँवों का अलग-अलग एक-एक अधिपति बनाया जाए। एक गाँव की समस्त आय और उपज गाँव का अध्यक्ष अपने पास रखे। उसी में से नियत वेतन देकर दस गाँव के अधिपति का भी भरण-पोषण करना चाहिए। इसी तरह दस गाँवों के अधिपति को भी बीस गाँवों के पालक का भरण-पोषण करना चाहिए। शासन का प्रमुख उद्देश्य प्रजा का हित था। अर्थशास्त्र में भी कहा गया हे कि प्रजा कि ख़ुशी में ही राजा की ख़ुशी हे -

"प्रजा सुखेसुखंराज्ञः प्रजानां च हितेहितम् ।
नात्मप्रियंप्रियंराज्ञः प्रजानांतुप्रियंप्रियम्" ॥[27]

राजा को उसके कार्यो में मन्त्रणा देने के लिए मन्त्रि परिषद थी। महाभारत में मन्त्रपरिषद के निर्माण में निम्नलिखित बातों पर बल दिया गया है-

- मन्त्रिपरिषद के निर्माण में समाज के विभिन्न वर्गो को प्रतिनिधित्व दिया जाए ।
- मन्त्रिपरिषद के सदस्यों की योग्यताओं का ध्यान रखा जाए।
- मन्त्रियों की संख्या कम से कम हों।

वर्जितं चैवव्यसनैःसुघोरैःसप्तभिर्भृशम् ।
अष्टानां
मन्त्रिणांमध्येमन्त्रंराजोपधारयेत् ॥[28]

[24] वही पृ.सं- 40

[25] प्राचीन भारत के राजनीतिक विचारक पृ.सं -78

[26] प्राचीन भारत के राजनीतिक विचारक पृ.सं -78

[27] अर्थशास्त्र / विनायाधिकार /19 पृ सं -45

[28] महाभारत/शान्तिपर्व 85/11पृ.सं- 502

शासन कैसा होना चाहिए इसका वर्णन सभापर्व के पाँचवें अध्याय में मिलता है।अच्छे प्रशासन के लिए राज्य को अनेक इकाइयों में बाँटना आवश्यक था । शान्तिपर्व 87.3 में एक, दस, बीस, और सौ ग्रामों की अलग - अलग इकाइयों का उल्लेख किया गया है। ग्राम राष्ट्र की सबसे छोटी इकाई थी । इसका प्रबन्ध ग्रामिक अपने गाँव के राजस्व का संचय कर उसे दस ग्रामिको के अधिकारी के पास भेजता हैं। वह दस ग्रामों का अधिकारी दशप कहलाता था। उसका मुख्य कार्य ग्रामिकों से राजस्व का संचय करना था। बीस ग्रामों का अधिकारी विशंपति, सौ ग्रामों का शतपाल, और हजार ग्रामों का अधिकारी सहस्त्रपति कहलाता था। ये सभी अधिकारी राजस्व सचिव के अधीन होते थे ।

ग्रामीयान्ग्रामदोषांश्चग्रामिकःप्रतिभावयेत्।
तान्बूयाद्दशपायासौ स तुविंशतिपायवै ॥[29]

"राज्य की राजधानी को पुर कहा गया है। पुर की रक्षा करने के लिए उसके चारों ओर गहरी खाई (परिखा) फिर ऊँची दीवार होती थी। पुर के एक भाग में राजदुर्ग या किला होता था जिसकी रक्षा हेतु विशेष सावधानी रखी जाती थी।

राज्य में व्यवस्था हेतु अधिकारियों की नियुक्ति प्रशासन का कर्तव्य था। शान्तिपर्व में कहा गया है कि मूर्ख, क्षुद्र, बुद्धिहीन अकुलीन और कामीजनों को राज्य संचालन हेतु नियुक्त करना युक्तिसंगत नही माना जाता था। राजा का कर्तव्य था कि वह साधु, कुलीन , ज्ञानी, अनिन्दक, पवित्र, द्रक्ष पुरुषों को ही विभिन्न पदों पर नियुक्त करें। राजा के लिए यह आवश्यक था कि वह अपने कर्मचारियों के कार्यो का समय-समय पर निरीक्षण करता रहे। महाभारत में प्रशासन (राजा) को अपने राज्य में विभिन्न प्रकार के उत्सव और समाज आदि के संगठन, नियंत्रण एवं संचालन अधिकार था।

महाभारत में वित्तीय प्रशासन का उल्लेख शान्तिपर्व में किया गया है। वित्तीय प्रशासन के लिए राजा उत्तरदायी था। शान्ति पर्व में उल्लेख है कि राजाओं का मूल और वृद्धि का कारण होता है। पुनः शान्तिपर्व में कहा गया है कि माली नीति का अनुसरण करता हुआ राजा प्रजा पालन में प्रवृत्त हो। व्यवसायियों के सम्बन्ध में कहा गया है कि उत्पत्ति, दान, वृत्ति, तथा सम्पूर्ण शिल्प कार्य को देखकर शिल्पियों के ऊपर कर लगाना चाहिए। इसी प्रकार यदि शत्रु के देश पर आक्रमण करने से राजा का अधिक धन व्यय हो गया है तो ब्राह्मणों के अतिरिक्त शेष प्रजा पर अतिरिक्त कर लगाकर संग्रह करना चाहिए। शान्तिपर्व में कहा गया है कि जो राजा कर तो ग्रहण करता है परन्तु उससे प्रजा की रक्षा नहीं करता वह चोर के समान है।

महाभारत काल में न्याय प्रशासन और दण्ड व्यवस्था को राजा का ही उत्तरदायित्व माना गया है। राजा को न्याय-अन्याय का विचार कर धर्म के अनुसार दण्ड विधान करना चाहिए, इच्छानुसार दण्ड देना उचित नही है। शान्तिपर्व में कहा गया है कि राज धर्म के अन्र्तगत राजा के माता-पिता भाई, पत्नी, और पुरोहित भी यदि दोषी पाये जाये तो उन्हें दण्ड देने का विधान है। उचित दण्ड की व्यवस्था राजा का उत्तम धर्म माना गया है।

अन्तिम रूप में राज्य और शासन का उद्देश्य प्रजा की सम्पन्नता, सुख-शान्ति और समृद्धि ही शासन का लक्ष्य था। इस प्रकार शासन का प्रत्येक कार्य प्रजा के कल्याणार्थ होना चाहिए।

संदर्भ-सूची

1. वाल्मीकि रामायण, गीता प्रेस गोरखपुर ,संस्करण 2078
2. अर्थशास्त्र : कमलनयन शर्मा, जगदीश संस्कृत पुस्तकालय जयपुर ,संस्करण-2017

[29] महाभारत /शान्तिपर्व /87 /4 पृ सं- 102

3. महाभारत : गीता प्रेस गोरखपुर ,संस्करण, 2078
4. राजनय : सिद्धांत एवं व्यवहार, डॉ. एम.पी. राय राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, प्रथम संस्करण - 1982
5. भारतीय राजनय : डॉ. शेफाली बार्थोनिया, गीतांजलि प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण 2010
6. प्राचीन भारत के राजनीतिक विचारक, प्रकाश नारायण नाटाणी, पॉइन्टरपब्लिसर्स, जयपुर, प्रथम संस्करण - 2002
7. आर्ष रामायण में मानव उत्कर्ष के सिद्धान्त, राजेश प्रसाद माथुर, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, प्रथम संस्करण 2012
8. रामायण कालीन राज्यादर्श, डॉ. प्रभा खरे, कला प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2009
9. संस्कृत संस्कृति और प्रशासन : डॉ. श्रीकृष्ण शर्मा, , राज गंगा चैरिटेबल ट्रस्ट, जयपुर, प्रथम संस्करण 2011
10. संस्कृत साहित्य का इतिहास : उमाशंकर 'ऋषि', चौखम्भा भारती अकादमी ,संस्करण 2017